(२) समवसरण स्तवन

कल्पद्रुम यह समवसरण हैं भव्यजीव का शरणागार;
जिनमुख घन से सदा बरसती चिदानन्दमय अमृत धार।

जहाँ धर्मावर्षा होती वह समवशरण अनुपम छविमान;
कल्पवृक्ष-सम भव्यजनों को देता गुण अनन्त की खान।
सुरपति की आज्ञा से धनपति रचना करते हैं सुखकार;
निज की कृति ही भासित होती अति आश्चर्यमयी मनहार॥ 1॥

निजज्ञायकस्वभाव में जमकर प्रभु ने जब ध्याया शुक्लध्यान;
मोहभाव क्षयकर प्रगटाया यथाख्यात चारित्र महान।
तब अन्तर्मुहूर्त में प्रगटा केवलज्ञान महासुखकार;
दर्पण में प्रतिबिम्ब तुल्य जो लोकालोक प्रकाशनहार॥ 2॥

गुण अनन्तमय कला प्रकाशित चेतन-चन्द्र अपूर्व महान;
राग आग की दाह रहित शीतल झरना झरता अभिराग।
निज वैभव में तन्मय होकर भोगें प्रभु आनन्द अपार;
ज्ञेय झलकते सभी ज्ञान में किन्तु न ज्ञेयों का आधार॥ 3॥

दर्शन ज्ञान वीर्य सुख से हैं सदा सुशोभित चेतनराज;
चौतिस अतिशय आठ प्रातिहार्यों से शोभित हैं जिनराज।
अन्तर्बाह्य प्रभुत्व निरखकर लहें अनन्त आनन्द अपार;
प्रभु के चरण-कमल में वन्दन कर पाते सुख शान्ति अपार॥ 4॥